शतायु की ओर

पंचदशम् पुष्पम्

मात्राकालाश्रया युक्तिः सिद्धिर्युक्तौ प्रतिष्ठिता।
तिष्ठत्युपरि युक्तिज्ञो द्रव्यज्ञानवतां सदा ।।

—चरक सू0 2/16

किसी भी औषधि की युक्ति (योजना) उसकी मात्रा और काल पर निर्भर करती है तथा युक्ति में सिद्धि (सफलता) प्रतिष्ठित (स्थित) है। द्रव्य का ज्ञान रखने वाले वैद्य से युक्ति को जानने वाला वैद्य सदा श्रेष्ठ रहता है।

बहुता तत्र योग्यत्वमनेकविधकल्पना ।
संपच्चेति चतुष्कोऽयं द्रव्याणां गुण उच्यते ।।

—चरक सू0 9/7

औषधियों का अधिक रूप में प्राप्त होना, औषधियों का व्याधिनाश में समर्थ होना, एक ही औषधि में अनेकविध (स्वरस, कल्क, चूर्ण, वटी, अवलेह आदि) कल्पना की योग्यता होना तथा औषधियों का अपने रस, गुण, वीर्य, विपाकादि गुणों से युक्त होना, ये चारों औषधि के उत्तम गुण माने जाते हैं।

धन्वन्तरि वाटिका, राज भवन

उत्तर प्रदेश, लखनऊ

DHANWANTARI VATIKA, RAJ BHAVAN, UTTAR PRADESH, LUCKNOW

श्री धन्वन्तरि जयन्ती, 09 नवम्बर, 2015

शतायु की ओर

औषधि पौधों का ज्ञान जन-जन तक

आज पूरे विश्व का जड़ी–बूटी एवं आयुर्वेदिक औषधियों के प्रति आकर्षण बढ़ा है और उनकी गुणवत्ता पर लोगों का ध्यान पुनः आकृष्ट हुआ है, वहीं इन औषधियों की उपलब्धता पर प्रश्न चिन्ह लग गया है। पूरे भारतवर्ष में जलवायु एवं मौसम के अनुसार अलग–अलग प्रदेशों में विभिन्न प्रकार की जड़ी–बूटियॉ पाई जाती हैं जिनमें से कुछ तो एक निश्चित काल में उगती हैं और वह एक निश्चित समय में नष्ट हो जाती हैं। जड़ी–बूटी की यह प्राकृतिक सम्पदा अपने देश में असीमित है। जरूरत है इनकी पहचान, संकलन, संरक्षण एवं प्रवर्धन की। तदोपरान्त आवश्यकतानुसार रोग निवारण एवं उनसे विभिन्न प्रकार की औषधियाँ निर्मित कर जन–सामान्य के स्वास्थ्य की रक्षा करना तथा रसायन के रूप में प्रयोग कर स्वस्थ एवं दीर्घायु को प्राप्त करना। इसीलिए भारतीय आध्यात्मिक ग्रन्थों में पौधों को देव समान मानकर उनकी पूजा अभ्यर्थना करने का स्वरूप बताया गया है। पौधों को मध्य योनि प्राप्त देवपुरूष कहा गया है।

यो देवो अग्नौ योऽप्सु यो विश्वं भुवनमाविवेश।
य ओषधीषु यो वनस्पतिषु तस्मै देवाय नमो नमः।।

श्वेताश्वतरोपनिषत् 2/17

''जो परमात्मा अग्नि में है, जल में है, समस्त लोगों में समाविष्ट है, जो औषधियों में है, सभी वनस्पतियों में है, उस परमात्मा को नमस्कार है।''

अमंत्रमक्षरं नास्ति, नास्तिमूलमनौषधम्।

कोई अक्षर अमन्त्र (शक्तिविरहित) नहीं होता और संसार में ऐसी कोई वनस्पति नहीं, जो कि औषधि न हो। सृष्टि की प्रत्येक वनस्पति में औषधीय गुण हैं, जो किसी न किसी रोग में, किसी न किसी रूप में, किसी न किसी स्थिति में प्रयुक्त होती है, बस जानकार होना चाहिए। महर्षि चरक ने तो वनौषधियों के बारे में चरवाहों, वनवासियों व गोपालकों से भी जानने के लिए लिखा है क्योंकि विशेष देश एवं विशेष क्षेत्र में औषधियों की उपलब्धता एवं इनके गुणों का परम्परागत ज्ञान उन्हें होता है।

सदियों से आयुर्वेदिक औषधि, जड़ी–बूटी आदि का प्राकृतिक स्रोत हमारे 'वन' रहे हैं परन्तु पिछले कुछ दशकों से जनसंख्या विस्फोट के कारण वनों के अंधाधुंध कटान से ऐसी भूमि जिनमें यह औषधियां पैदा होती थीं कम हो गयी। वर्तमान में हर स्तर पर आयुर्वेदिक औषधियों की मांग बढ़ रही है और औषधि निर्माता भी सही जड़ी–बूटी के अभाव में उपलब्ध नकली एवं अवांछित पौधे/वनस्पति मिलाकर अप्रमाणित औषधियॉ निर्माण कर विक्रय करने हेतु विवश हैं। जिससे लोगों को वांछित लाभ न होकर हानि की सम्भावना बनी रहती है, साथ ही इस प्राचीन भारतीय चिकित्सा पद्धति (आयुर्वेद) की गुणवत्ता पर प्रश्नचिन्ह लग रहे हैं। हम सबको आज इस दिशा में रूचि लेकर इन जड़ी–बूटियों, आयुर्वेदिक एवं यूनानी औषधियों के संरक्षण एवं प्रवर्धन हेतु आगे आना चाहिए।

जड़ी–बूटियों की संख्या अगणित है। भारत में 500 से अधिक पादप प्रजातियों का ओषध रूप में प्रयोग किया जाता है। सर्वोपरि तथ्य यह है कि हमारा देश पूर्ण रूप से देशज चिकित्सा पद्धतियों, मुख्यतः आयुर्वेद तथा यूनानी के विकास तथा उपयोग में विश्व में अग्रणी है। वर्तमान समय में देश की जड़ी–बूटियों की कुल आवश्यकता का लगभग 20 प्रतिशत आयात से तथा 80 प्रतिशत देशज स्रोतों से प्राप्त हो रहा है, जिसका 75 प्रतिशत से अधिक भाग प्राकृतिक स्रोतों से संग्रहण द्वारा उपलब्ध हो रहा है। विश्व की लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या आज भी आधुनिक सुख सम्पदा युक्त

21 अक्टूबर, 2014 – श्री धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर राज भवन, उ.प्र. में रक्तचन्दन भेद *(Adenanthera pavonina)* का पौधा रोपित करते हुए, श्री राम नाईक, माननीय राज्यपाल, उत्तर प्रदेश

नागरिक जीवन से दूर प्रकृति के आंचल में अपना जीवन व्यतीत कर रही है। यह लोग अपने अनेकों रोगों की चिकित्सा व्यवस्था प्रकृति प्रदत्त संसाधनों से ही करते हैं एवं स्वास्थ्य लाभ प्राप्त करते हैं। पशु–पक्षी, जीव–जन्तु सभी अपने–अपने रोगों से छुटकारा पाने के लिए आवश्यक जड़ी–बूटी की जानकारी रखते हैं एवं उसका सफलतापूर्वक प्रयोग करते देखा गया है।

अतः आयुर्वेद को पुनर्स्थापित करने के लिए औषधीय उपयोग की जैव सम्पदा के संग्रह एवं भण्डारण के लिए विशेष एवं प्रभावी नीति की आवश्यकता है। औषधीय उपयोग की जैव सम्पदा का सर्वाधिक महत्वपूर्ण अंग है, इसका संरक्षण एवं विपणन। आज इसका संग्रह, भण्डारण एवं बाजार अकुशल तथा व्यवसायिक हाथों में है। प्राचीनकाल में वैद्य एवं हकीमों द्वारा स्वयं के द्वारा विधि–विधानपूर्वक वनों से अथवा उपवनों से जड़ी बूटियां संकलित करने के उल्लेख मिलते हैं। बाजार के व्यवसायी बन्धुओं ने यह काम सस्ते अकुशल मजदूरों के ऊपर छोड़ दिया तथा उन श्रमिकों को यह ज्ञान कभी नहीं रहा कि जिन पौधों को वह उखाड़ रहा है व औषधीय गुणों के अनुसार परिपक्व अवस्था में है या नहीं। उसकी पत्तियां कीटों एवं रोगों द्वारा संक्रमित तो नहीं हो चुकी हैं अथवा वह इच्छित प्रजाति के अतिरिक्त उससे मिलती जुलती कोई अन्य प्रजाति को तो संकलित नहीं कर रहा है। व्यवसायी भी वैद्य/हकीम नहीं हैं और व्यवसायिक जानकारी है तो अल्प ही है। जैव सम्पदा के औषधीय उपयोग के साथ एक शब्द जुड़ा है 'वीर्यकाल अवधि' इस शब्द का औषधि निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान है। यदि आपने सही समय पर सही औषधीय बूटी का संग्रह किया है तब भी उसका औषधीय उपयोग एक निश्चित समय सीमा में करना आवश्यक है। इसके उपरान्त उसके औषधीय गुण हीन होते–होते निस्तेज हो जायेंगे।

आज आधुनिकता की दौड़ में हम अपनी परम्परागत घरेलू चिकित्सा में प्रयोग की जाने वाली जड़ी–बूटियों को भी भूल गये हैं और सर्वसुलभ औषधीय पौधों की पहचान भी अब हमें नहीं रही। इन आयुर्वेदीय औषधि पौधों के महत्व के दृष्टिगत फरवरी 2001 में सर्वप्रथम उत्तर प्रदेश के राजभवन में आयुर्वेद के प्रवर्तक श्री धन्वन्तरि के नाम पर ''धन्वन्तरि वाटिका'' (आयुर्वेदीय औषधि पौधों की वाटिका) की स्थापना हुई। वाटिका का मुख्य उद्देश्य आयुर्वेदीय औषधि पौधों के ज्ञान को

जन–जन तक पहुँचाना है, और यह तभी सम्भव है जब ऐसी धन्वन्तरि वाटिकाएँ प्रदेश के विभिन्न अंचलों में स्थापित हों तथा इन पौधों के औषधीय गुणों के विषय में जन सामान्य को बहुमूल्य जानकारी उपलब्ध कराई जाये ताकि वे आयुर्वेद के रूप में प्राप्त पूर्वजों की अनमोल धरोहर से लाभ उठा सकें।

वर्ष 2001 में ही वन विभाग, उ0प्र0 ने हरित अभियान के अन्तर्गत इस ''धन्वन्तरि वाटिका'' का अनुसरण कर आयुर्वेदीय औषधि पौधों को रोपित करने तथा उनके औषधीय गुणों की व्यापक जानकारी देने हेतु ''धन्वन्तरि वाटिका'' का पत्रक प्रकाशित करवाकर जन सामान्य में वितरित किया। तदुपरान्त प्रदेश के अनेक स्थानों पर औषधि पौधों की वाटिकाएँ स्थापित हो चुकी हैं और औषधि पौधों को उगाने के प्रति लोगों का रूझान बढ़ा है। कृषि, उद्यान एवं वन से जुड़े हुए सभी सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थानों, कृषकों तथा उद्यमियों को चाहिए कि वर्तमान में औषधि पौधों की खेती एवं उनके संरक्षण को बढ़ावा दें तथा विपणन की ऐसी व्यवस्था हो जिससे उनको आर्थिक लाभ भी मिल सके तभी इन बहुमूल्य जड़ी–बूटियों का समुचित लाभ जन सामान्य को मिल सकेगा तथा स्वास्थ्य लाभ के साथ–साथ पर्यावरण की दृष्टि से भी औषधीय पौधों का रोपण लाभकारी सिद्ध होगा।

इसी परिप्रेक्ष्य में कुछ सुलभ उपलब्ध वनस्पतियों का परिचय एवं उनके औषधीय उपयोग के बारे में जानकारी यहाँ दी जा रही है–

तुलसी (Holy Basil)

वानस्पतिक नाम : ***Ocimum sanctum***
प्रचलित नाम : बहुमंजरी, सुलभा, ग्राम्या, देवदुन्दुभि, विष्णुप्रिया, वृन्दा
प्रयोज्य अंग : प्रत्येक भाग (पंचांग– मूल, तना, पत्ती, पुष्प, बीज)

तुलसी एक सुपरिचित एवं सर्वत्र पाई जाने वाली वनस्पति है, जो बगीचों, मन्दिरों एवं घरों में लगाई जाती है। वनस्पतियों में सर्वाधिक धार्मिक, आध्यात्मिक, आरोग्यवर्धनी एवं शोभा की दृष्टि से तुलसी को मानव जीवन में महत्वपूर्ण, पवित्र तथा श्रद्धेय स्थान मिला है। आध्यात्मिक गुणों के अतिरिक्त तुलसी द्वारा असाधारण स्वास्थ्य एवं रोग निवारक लाभ प्राप्त होते हैं। तुलसी की पत्तियों तथा पुष्पमंजरी से एक लवंगगन्धि उड़नशील तेल प्राप्त होता है। पत्तियों में एस्कार्बिक एसिड और कैरोटिन होता है। बीजों में एक स्थिर तैल पाया जाता है। इसके अतिरिक्त पौधे में क्षाराभ, ग्लाइकोसाइड और टैनिन होते हैं। सामान्य रूप से तुलसी के दो भेद हैं– श्वेत (रामा) एवं कृष्ण (श्यामा) तुलसी। कृष्ण तुलसी श्वेत की अपेक्षा अधिक गुणकारी मानी गई है।

गुण : कफनिःसारक, वेदनाहर, दीपन, रक्तशोधक, क्षयनाशक, हृद्य, वातानुलोमक, बल्य, कृमिघ्न।

उपयोग : 1. विषम ज्वर में इसकी 21 पत्तियों को 4 कालीमिर्च के साथ काढ़ा बनाकर पीने से लाभ होता है। 2. चर्म रोगों (दद्रु, कुष्ठ) में इसके मूल (जड़) का रस प्रतिदिन प्रातःकाल पीने से लाभ मिलता है। 3. कर्णशूल में इसके पत्रों के स्वरस से सिद्ध किया हुआ तेल कान में डालने से लाभ मिलता है तथा पुराने जुकाम में नासिका छिद्रों में एक–दो बूंद डालने से लाभ होता है। 4. नेत्र रोगों में तुलसी के रस में मधु मिलाकर अंजन करने से लाभ मिलता है। 5. तुलसी के बीज पौष्टिक होने के कारण इसके बीजों के चूर्ण को दूध के साथ लेने से शक्ति में वृद्धि होती है तथा क्षय रोग से बचाव करता है। 6. इसकी पत्तियों का सेवन शरीर में किसी प्रकार से हुई विषाक्तता को दूर करने, रक्तविकार तथा हृदय रोगों में लाभकारी है तथा जीवनीशक्ति को बढ़ाता है। 7. बार–बार होने वाले जुकाम तथा

21 अक्टूबर, 2014 – श्री धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर राज भवन, उत्तर प्रदेश में 'शतायु की ओर' पत्रक के चतुर्दशम् अंक का लोकार्पण करते हुए श्री राम नाईक, माननीय राज्यपाल, उत्तर प्रदेश

खांसी में तुलसी, अदरक, कालीमिर्च, मुलेठी, ज्वराँकुश (लेमन ग्रास) का काढ़ा बनाकर दिन में दो–तीन बार पीने से लाभ होता है। इस काढ़े में गिलोय (गुडुची) (एक अंगुल मोटे तथा 6 से 8 इंच लम्बे टुकड़े) को उबाल कर पिया जाय तो मौसमी बुखार (वायरल फीवर) आदि में आराम मिलता है। स्वाद के अनुसार इसमें मिश्री या चीनी मिला सकते हैं। 8. तुलसी की पत्तियों का चूर्ण मधुमेह तथा मेद (बढ़े हुए कोलेस्ट्राल) को दूर करने में भी लाभकारी पाया गया है।

गिलोय (Gulancha Tinospora)

वानस्पतिक नाम : ***Tinospora cordifolia***
प्रचलित नाम : गुडिच, अमृता, गुडूची, मधुपर्णी, चक्रलक्षणिका, कुण्डलिनी, तंत्रिका
प्रयोज्य अंग : काण्ड (तना)

यह सर्वत्र पाई जाने वाली एक बहुवर्षीय आरोही लता है। जो नीम, आम आदि वृक्षों पर कुण्डलाकार चढ़ती है। इसका तना मांसल होता है तथा शाखाओं से अनेक सूत्राकार मूल निकल कर नीचे की ओर झूलते रहते हैं। इसकी पत्तियां हृदयाकार होती हैं। इसके तने में बर्बेरिन, तिक्त ग्लुकोसाइड (गिलोइन), टिनोस्पोराइड, कार्डीफोलिन, वसा अम्ल, उड़नशील तेल, कैल्शियम, फास्फोरस आदि पाये जाते हैं तथा एक पोषक द्रव्य (स्टार्च) प्राप्त होता है जिसे गिलोयसत् कहते हैं।

गुण : त्रिदोषशामक, ज्वरहर, रक्तशोधक, बल्य, मूत्रल, विषघ्न, रसायन

उपयोग : 1. किसी भी प्रकार के ज्वर को दूर करने के लिए ताजी या सूखी गिलोय के काढ़े का प्रयोग किया जाता है। इससे बने अमृतारिष्ट का सेवन जीर्ण ज्वर, पीलिया, खून की कमी आदि में किया जाता है। 2. कुष्ठ एवं चर्म रोगों में गिलोयसत् का प्रयोग वाकुची बीज के चूर्ण के साथ लेने से लाभ होता है। 3. वात रक्त (गाउट) में गिलोय का चूर्ण शुद्ध गुग्गुलु के साथ लेना लाभप्रद है। 4. गिलोय स्वरस में पिप्पली चूर्ण तथा शहद मिलाकर सेवन करने से खांसी, प्लीहा रोग तथा अरूचि रोग नष्ट होते हैं। 5. सब प्रकार के प्रमेह को दूर करने तथा किसी भी लम्बी व्याधि के बाद शरीर में आई हुई दुर्बलता को दूर करने के लिए गिलोय को रसायन के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। एक अंगुल मोटे तने की ताजी गिलोय जो 6 से 8 इंच

13 जुलाई, 2015 – राज भवन, उत्तर प्रदेश में जामुन (*Syzygium cumini*) का पौधा रोपित करती हुई श्रीमती कुंदा नाईक, लेडी गवर्नर, उ.प्र. एवं सुश्री जूथिका पाटणकर, प्रमुख सचिव, श्री राज्यपाल, उ.प्र.

28 अगस्त, 2015 – राज भवन, उत्तर प्रदेश में अनार (*Punica granatum*) का पौधा रोपित करती हुई श्रीमती राम कली, उद्यान कर्मी, राज भवन, उ.प्र.

लम्बी हो, उसको कुचल कर 200 ग्राम पानी में उबालें, जब चौथाई पानी शेष बचे तो उसे ठण्डा होने पर छानकर 2 चम्मच शहद के साथ सेवन करने से सभी प्रकार के प्रमेह रोगों में लाभ मिलता है तथा आयु में भी वृद्धि होती है। 6. गुडूची के तने से सिद्ध तेल का अनेकों प्रकार के चर्म रोग, कुष्ठ रोग तथा वातरक्त में प्रयोग लाभकारी है। 7. मौसमी एवं विभिन्न प्रकार के ज्वरों में शरीर की रक्षा प्रणाली को सुदृढ़ करने एवं प्लेटलेट्स की कमी हो जाने पर गुडूची के काढ़े को पपीते के पत्ते के दो चम्मच रस के साथ दिन में दो बार उपयोग करने से आशातीत लाभ होता है। 8. गिलोय का चूर्ण या गिलोयसत् का प्रयोग यकृत विकार, अम्ल पित्त तथा मधुमेह के रोगियों में लाभकारी है।

मात्रा : इसके काढ़े का प्रयोग 50 से 100 मि0ली0, चूर्ण 3 से 6 ग्राम, सत् 500 मि0ग्रा0 से 1 ग्राम एवं ताजा स्वरस 10 से 20 मि0ली0 तक प्रतिदिन।

विशिष्ट योग : गुडूच्यादि चूर्ण, गुडूच्यादि क्वाथ, अमृतारिष्ट, गुडूची लौह, गुडूची तैल, अमृतघृत, गिलोय सत्

हरसिंगार (Night Jasmine)

वानस्पतिक नाम : ***Nyctanthes arbor-tristis***
प्रचलित नाम : पारिजात, शेफालिका, कोरल जैस्मिन, हारशणगार
प्रयोज्य अंग : पत्र, पुष्प, छाल एवं बीज

समस्त भारतवर्ष में पाये जाने वाला एक लघु झाड़ीनुमा वृक्ष जो औसतन 10 से 15 फीट ऊँचा होता है। इसके पत्ते खुरदुरे, अण्डाकार एवं नोकदार, अधःसतह मृदु रोमश होते हैं। पुष्प सफेद तथा पुष्पवृंत केसरी रंग का तथा सुगन्धित होते हैं। पुष्प रात में खिलते हैं तथा सूर्योदय के पूर्व ही झड़ जाते हैं। इसीलिए इस वृक्ष को Tree of sorrow भी कहा जाता है। इसके पुष्पों में एक सुगन्धित तेल होता है। रंगीन पुष्पनलिका में निक्टैन्थीन नामक रंगद्रव्य ग्लुकोसाइड के रूप में होता है। इसकी पत्तियों में टैनिक एसिड, मेथिल सैलिसिलेट, एक ग्लाइकोसाइड, मैनिटाल, एक राल, कुछ उड़नशील तेल, विटामिन 'सी' और 'ए' पाया जाता है। छाल में एक ग्लाइकोसाइड और दो क्षाराभ होते हैं।

गुण : कफवातहर, ज्वरघ्न, स्वेदजनन, केश्य, मूत्रल, मृदुरेचक, यकृतोत्तेजक।
उपयोग : 1. गृध्रसी (सियाटिका) के दर्द तथा आमवात में इसके 11 पत्रों का काढ़ा बनाकर पीना अत्यन्त लाभकारी है। 2. जीर्ण ज्वर, विषम ज्वर (मलेरिया) में इसके 7–8 कोमल पत्रों के स्वरस के साथ मधु मिलाकर सेवन करना अति लाभकारी है। 3. गंजा हो जाने पर इसके बीजों को जल में पीस कर लगाने से नये बाल उगते हैं तथा रूसी (डैन्ड्रफ) को भी दूर करने में लाभकारी है। 4. इसके बीज का चूर्ण बवासीर में लाभकारी है। 5. बच्चों के कृमि रोग में इसके पत्ते के स्वरस में मिश्री मिलाकर देने से कृमि बाहर निकल जाते हैं। 6. खांसी तथा दमा में इसकी छाल के चूर्ण को पान के रस में देने से लाभ होता है। 7. इसके पत्रों का स्वरस यकृत विकार, बवासीर तथा कब्ज को दूर करने में लाभकारी है। 8. इसके सूखे फूलों का काढ़ा मधुमेह तथा खूनी बवासीर में उपयोगी है।
प्रयोज्य मात्रा : स्वरस 10 से 20 मि0ली0, चूर्ण 1 से 3 ग्राम एवं क्वाथ (काढ़ा) 30 से 50 मि0ली0।

नीम (Margosa Tree)

वानस्पतिक नाम : ***Azadirachta indica***
प्रचलित नाम : निम्ब, अरिष्ट, पिचमर्द
प्रयोज्य अंग : प्रत्येक भाग (पंचांग– मूल, तना, पत्ती, पुष्प, फल)

यह भारतवर्ष में सर्वत्र पाया जाने वाला एक विशाल एवं सघन वृक्ष है, जिसके पत्र नुकीले दंतुर होते हैं, पुष्प छोटे–छोटे सफेद तथा सुगंधयुक्त होते हैं। फल लम्बगोल, कच्ची अवस्था में हरे तथा पकने पर पीले होते हैं, जिन्हें निमौली कहा जाता है। पतझड़ में इनकी पत्तियाँ झड़ जाती हैं और वसन्त में ताम्रलोहित पल्लव निकलते हैं। फूल वसन्त ऋतु में तथा फल ग्रीष्म ऋतु के अन्त में एवं वर्षा के प्रारम्भ में लगते हैं। सदियों से अनाज को कीटों से बचाने हेतु भण्डारण में इसकी पत्तियों को साथ में रखा जाता रहा है। आजकल भी प्राकृतिक कीटाणुनाशक के रूप में अनेकों प्रकार के हैण्डवाश, फेसवाश एवं सौन्दर्य प्रसाधनों में इसका प्रयोग प्रचुरता से किया जा रहा है। यह वृक्ष अपने अद्‌भुत गुणों के कारण गांव का दवाखाना एवं पवित्र वृक्ष के नाम से जाना जाता है।

इसमें मार्गोसिन, निम्बिडिन, गंधक, निम्बिन, निम्बोस्टिराल, टैनिन, उत्पत तैल, राल, ग्लाइकोसाइड्स, वसा अम्ल, गोंद, एमीनो एसिड होता है। पत्रों में उपरोक्त तत्वों के अतिरिक्त क्वेरसेटिन, बिटा–सिटो स्टीराल (निम्बास्टीराल) तत्व भी पाये जाते हैं।

गुण : ग्राही, कफ और पित्त शूल शामक, मृदुरेचक, कृमिघ्न, व्रण रोपण, यकृत उत्तेजक एवं ज्वरघ्न।
उपयोग : 1. नीम की दातून करने से मुख की दुर्गन्ध दूर होती है एवं मुखरोग नहीं होते हैं। 2. इसकी पत्तियों का लेप फोड़ा–फुन्सी, जलने एवं घाव को ठीक करने के लिए किया जाता है। 3. खसरा और मसूरिका के होने पर इसके पत्तियों को बिस्तर पर बिछाते हैं तथा इसकी कोमल पत्तियों का 10 बूंद रस मधु के साथ पिलाने पर लाभ होता है। 4. इसकी 11 कोमल पत्तियों का प्रयोग प्रातः खाली पेट किया जाय तो नाना प्रकार के चर्मरोग ठीक हो जाते हैं। 5. इसके तने की छाल को पानी में घिसकर चेहरे पर लगाने से मुहाँसे एवं झांई में आराम मिलता है। 6. नीम की गूदी (बीज के अन्दर का भाग) का चूर्ण 2 से 3 ग्राम या नीम का तेल 15 से 20 बूंद गुनगुने पानी के साथ सेवन करने से मधुमेह रोग ठीक होता है। 7. नीम के बीज का प्रयोग बवासीर एवं कब्ज को दूर करने के लिए गुड़ के साथ देना लाभप्रद हैं।

8. नीम की छाल एवं बबूल की छाल दोनों 10–10 ग्राम का काढ़ा बनाकर प्रतिदिन लिया जाय तो श्वेत प्रदर (ल्यूकोरिया) ठीक होता है। 9. पेट में कीड़े (कृमि) होने पर इसकी पत्तियों का 2 चम्मच रस मधु मिलाकर सेवन करने पर कृमि पेट से बाहर हो जाते हैं। 10. नीम के तेल का प्रयोग अनेक प्रकार के चर्म रोगों में किया जाता है। सन्धिशोथ, आमवात के रोगियों में इसकी मालिश करते हैं। बाल झड़ने एवं पकने पर इसके तैल का नस्य लेने से लाभ होता है। 11. इसके फूल चर्म रोगों में अत्यन्त लाभकारी हैं। 5 से 10 ग्राम सूखे हुए फूलों का काढ़ा बनाकर प्रतिदिन सेवन करने से खून साफ होता है और त्वचा के सभी प्रकार के रोगों में आराम मिलता है। 12. इसके फूलों का काढ़ा विषम ज्वर (मलेरिया), मूत्र विकार, सूजन, घाव एवं मधुमे में अत्यन्त लाभकारी है। 13. वसन्त ऋतु में जब ताजे फूल उपलब्ध होते हैं, तो उन्हें 20–30 ग्राम तक प्रतिदिन रात्रि में 10–15 लीटर पानी में भिगो दें फिर उस पानी से प्रातः 7–10 दिन तक लगातार स्नान करने पर पूरे वर्ष भर फोड़े–फुन्सी एवं किसी भी प्रकार के त्वचा रोग नहीं होते हैं। 14. इसके फूलों का स्वरस मधु के साथ आँख में लगाने से नेत्रों की ज्योति बढ़ती है।

औषधि संग्रह काल : हेमन्त में लिया हुआ कन्द, शिशिर में लिया हुआ मूल, वसन्त में लिया हुआ पुष्प और ग्रीष्म में लिया हुआ पत्र गुणकारक होता है। शरद्काल में लिये औषधिद्रव्य नये, ताजे और सरस लेने चाहिये। यदि नये न मिलें, तो जिनको लाये हुए एक साल न बीता हो, ऐसे उत्तम द्रव्य के स्वाभाविक रस–गन्ध–वर्ण (रंग) आदि न बदले हों, ऐसे उत्तम द्रव्य काम में लेने चाहिये। औषधि के लिए गुड़, धान्य, घी, शहद एक साल के ऊपर के लेने चाहिये।

– राज निघण्टु

महत्वपूर्ण निर्देश : पत्रक में औषधीय पौधों का उनके गुण/उपयोग के अनुसार दी गयी जानकारी को चिकित्सकीय प्रयोग करने से पूर्व प्रशिक्षित, पंजीकृत आयुर्वेद/यूनानी चिकित्सक का परामर्श आवश्यक है।

धन्वन्तरि वाटिका का उद्देश्य

राज भवन में स्थापित की गयी धन्वन्तरि वाटिका का मुख्य उद्देश्य आयुर्वेदीय औषधि पौधों के ज्ञान को जन-जन तक पहुँचाना है। यह तभी सम्भव है जब ऐसी धन्वन्तरि वाटिकाएं प्रदेश के विभिन्न अंचलों में स्थापित हों तथा इन पौधों के औषधीय गुणों के विषय में जन सामान्य को बहुमूल्य जानकारी उपलब्ध कराई जाय ताकि वे आयुर्वेद के रूप में प्राप्त पूर्वजों की अनमोल धरोहर से लाभ उठा सकें।

आभार : इस पत्रक में प्रकाशित सामग्री का संकलन विभिन्न संहिताओं एवं स्रोतों से किया गया है।

कृषि विभाग, उत्तर प्रदेश के सहयोग के लिए आभार
कृषि विभाग, उ.प्र. द्वारा कृषकों के हित में संचालित मुख्य योजनाएँ

1. कृषि के समग्र विकास हेतु "राष्ट्रीय कृषि विकास योजना" का संचालन।
2. गेहूँ, धान एवं दलहन के उत्पादन में वृद्धि हेतु राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन योजना का संचालन।
3. मृदा स्वास्थ्य सुधार योजना का संचालन।
4. जिंक सल्फेट, जिप्सम, जैव उर्वरक एवं बायो एजेन्ट की कृषकों को अनुदान पर उपलब्धता।
5. कृषकों की जागरूकता हेतु विभिन्न स्तरों पर कृषक प्रशिक्षण कार्यक्रम।
6. कृषि यंत्रीकरण को बढ़ावा देने हेतु कृषकों को अनुदान पर उन्नत कृषि यंत्रों की उपलब्धता।
7. पूर्वी उत्तर प्रदेश में कृषि उत्पादन में वृद्धि हेतु "हरित क्रान्ति की विस्तार योजना" का संचालन।
8. भूमि सेना योजना का संचालन।

☞ कृषि विभाग से संबंधित अधिक जानकारी हेतु निःशुल्क दूरभाष 1800-180-1551 पर सम्पर्क करें या विभागीय वेबसाइट agriculture.up.nic.in देखें

आलेख : डा० शिव शंकर त्रिपाठी, एम.डी.(आयु.)
प्रभारी चिकित्साधिकारी, राज भवन आयुर्वेदिक चिकित्सालय एवं
प्रभारी अधिकारी, धन्वन्तरि वाटिका, राज भवन, उ0प्र0, लखनऊ
दूरभाष - 0522-2620494 (विस्तार- 210) 0522-2419887 (नि0)
प्रकाशक : धन्वन्तरि वाटिका, राज भवन, उत्तर प्रदेश, लखनऊ
मुद्रक : संयुक्त निदेशक, कृषि ब्यूरो
9, यूनिवर्सिटी रोड, लखनऊ। दूरभाष - 0522-2781042